

आस्तिक परम्परा में योग उपासना

Narender Kumar^{1*} Dr. Sukhbir Sharma²

¹ Research Scholar, Department of Yoga and Health Sciences, OPJS University, Churu, Rajasthan

² Associate Professor, Department of Yoga and Health Sciences, OPJS University, Churu, Rajasthan

सार – ऐसा माना जाता है कि जब से सभ्यता शुरू हुई है तभी से योग किया जा रहा है। योग के विज्ञान की उत्पत्ति हजारों साल पहले हुई थी, पहले धर्मों या आस्था के जन्म लेने से काफी पहले हुई थी। योग विद्या में शिव को पहले योगी या आदि योगी तथा पहले गुरु या आदि गुरु के रूप में माना जाता है।

योग उपासना क्या है?

‘ईश्वरोक्त वेद जो कि सब सत्य विद्याओं का आदि मूल है उसमें से जिस विद्या से मनुष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है उसका चयन किया, जिसका नाम है योगविद्या, आध्यात्मिक विद्या, मोक्ष विद्या, ब्रह्मविद्या या पराविद्या।’ [1] वेदों में यह योग विद्या यत्र तत्र बिखरी पड़ी है, जिसे सर्वप्रथम महर्षि पतंजलि ने अपने योगसूत्र नामक ग्रन्थ में समेट कर हमें इस विद्या को विरासत रूप में सौंप दिया है। इस योग विद्या को जो भी नाम दिया जाये, मगर उसका अन्तिम पड़ाव समाधि होता है। महर्षि व्यास के शब्दों में, समाधि ही ‘योग’ है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने योग उपासना को सरलतम शब्दों में इस प्रकार समझाया है, ‘चित्त की वृत्तियों को सब बुराइयों से हटा के, शुभ गुणों में स्थिर करके, परमेश्वर के समीप में मोक्ष को प्राप्त करने को योग कहते हैं।’ [2] ‘योगः समाधिः।’ [3] अर्थात् ईश्वर के परमानन्द की अनुभूति करने की अवस्था ही ‘समाधि’ अर्थात् योग है। अतः समाधि का अर्थ है वह अवस्था जिसमें साधक ईश्वर का साक्षात्कार कर परमानन्द को प्राप्त होता है। इसलिए, वेद के काल से लेकर महर्षि दयानन्द के काल तक ऋषियों ने योग को उपासना के रूप में स्वीकार किया है।

योग उपासना का क्रियात्मक स्वरूप:

महर्षि पतंजलि ने योग के आठ सोपान बताकर योग उपासना को सरल बनाया है। ये आठ सोपान हैं - ‘यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।’ [4] ‘योग के आठ अंगों का क्रमशः अनुष्ठान करके व उनको आचारण में

लाने से चित्त के मल का अभाव होकर वह सर्वथा निर्मल हो जाता है।’ [5]

पात’ जलकृत योग उपासना का पहला अंग ‘यम’ है। ‘अहिंसासत्याऽस्तेयब्रह्मचर्याऽपरिग्रहा यमाः॥’ [6] अर्थात् किसी से वैर-भाव न रखें; सत्य भाषण, सत्य मानना और सत्य ही कार्य करें - मिथ्या व्यवहार कभी न करें; जितेन्द्रिय बनें अर्थात् इन्द्रिय-संयम रखें; और कभी अभिमान न करें - ये पांच ‘यम’ कहलाते हैं।

पतंजलिकृत योग उपासना का दूसरा अंग ‘नियम’ है। ‘शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वर- प्रणिधानानि नियमाः॥’ [7] अर्थात् जलादि से शरीर को तथा सुविचार ग्रहण करके मन को पवित्र रखें; धर्मपूर्वक कार्य करते हुये लाभ की स्थिति में अतिप्रसन्न न हों और हानि की दशा में अप्रसन्न न हों, लोभ-मोहादि से दूर रहें; आलस्य छोड़ सदा पुरुषार्थ करते रहें; नित्यप्रति सत्यशास्त्रों को पढ़ें-पढ़ावें, सत्पुरुषों का संग करें और चिन्तन-मनन करें; और स्वयं को परमात्मा की आज्ञापालन में समर्पित कर दें - ये पांच नियम कहलाते हैं।

ऋषि पतंजलि के अनुसार, यम-नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन करने से ही योगावस्था को प्राप्त किया जा सकता है। तत्पश्चात् यथायोग्य आसन में बैठें। ‘स्थिर सुखमासनम्। यह आसन का लक्षण कहा गया है। आसन वही है कि जिसमें सुख से बैठकर ईश्वर से योग हो सके। ‘तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।’ [8] ‘जो वायु बाहर से भीतर को आता है, उस को श्वास और भीतर से बाहर को जाता है, उसे प्रश्वास कहते हैं। उन दोनों के जाने आने के विचार से रोके। नासिका को हाथ से कभी न पकड़ें, किन्तु ज्ञान से ही

उनके रोकने को प्राणायाम कहते हैं।”[9] “ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्।”[10] अर्थात् प्राणायाम के अभ्यास से आत्मा के ज्ञान को ढकने वाला आवरण नष्ट हो जाता है, जिससे आत्मा का ज्ञान प्रकट होने लगता है। इसके बाद पतंजलि ने प्रत्याहार कहा है। “स्वविषयासंप्रयोगे चित्तस्वरूपाऽनुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।”[11] अर्थात् जब पुरुष अपने मन को जीत लेता है तो स्वतः इन्द्रियों को भी जीत लेता है, यही प्रत्याहार है। उपासना का छटा व सातवां अंग धारणा एवं ध्यान है। “धारणा उसको कहते हैं कि मन को चंचलता से छुड़ा के नाभि, हृदय, मस्तक, नासिका और जीभ के अगभाग आदि देशों में स्थिर करके ओंकार का जप और उसका अर्थ जो परमेश्वर है उसका विचार करना।”[12] इस समय में ईश्वर के स्वरूप के अतिरिक्त अन्य किसी का भी ध्यान नहीं करना चाहिए। इसी अवस्था का नाम ध्यान है। जब इस स्थिति में परमात्मा के सर्वश्रेष्ठ नाम ‘ओ३म्’ का अर्थ सहित चिन्तन अर्थात् वह सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, निराकार, न्यायकारी, दयालु, चेतन और आनन्दस्वरूप होने वाले चिन्तन किया जाता है, तदन्तर उसकी भावना की जाती है तब वह धारणा सुदृढ़ होकर ध्यान कहलाती है। “जिस देश में धारणा की जाय, उसी में ध्यान और उसी में समाधि अर्थात् ध्यान करने के योग्य परमेश्वर में मग्न हो जाने को संयम कहते हैं।”[13] अतः ध्यान की उच्चतर अवस्था को शास्त्राचारों ने समाधि नाम दिया है।

योग दर्शन में वर्णित अन्य ध्यान विधियाँ:

अतः स्वयं महर्षि पतंजलि के द्वारा योग सूत्र में ही उपरोक्त के अलावा भी अनेक ध्यान विधियों का उल्लेख किया गया है। उन्होंने “परमात्मा का मुख्य नाम ‘ओ३म्’ बताया गया है।”[14] ध्यान लगाने के लिए साधक को ईश्वर के ओ३म् नाम का निरन्तर जप उसके गुण, कर्म, स्वभाव का चिन्तन करते हुए करना चाहिए, इस जप को प्रणव जप भी कहते हैं। ईश्वर का गुण-कर्म-स्वभाव कैसा है, यह भी इसी शास्त्र में बताया गया है। योग दर्शन के अनुसार, “अविद्यादि क्लेश, शुशाशुशादि कर्म, सुख-दुःखरूपी कर्मफल और उस सुख-दुःख से निर्मित संस्कारों से रहित वह ‘ईश्वर’ पुरुष विशेष है अर्थात् वह अन्य पुरुष जो कि आत्मा है, से भिन्न है।”[15] “वह सर्वज्ञ है”[16] और “वह आदि काल से लेकर अब तक वह गुरुओं का भी गुरु है तथा भविष्य में भी होगा।”[17]

महर्षि पतंजलि ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ योगदर्शन के माध्यम से एकाग्रता बढ़ाने एवं ध्यान अभ्यास हेतु ओर भी उपाय किये हैं-

i) “मैत्रीकरूणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम्।।” [18]

अर्थात्, सुखी प्राणियों के साथ मित्रता करने, दुःखी प्राणियों पर दया करने, पुण्य धर्मात्माओं के संग में प्रसन्न रहने और दुष्ट पापी व्यक्ति की उपेक्षा (न मित्रता और न ही शत्रुता) करने से साधक का चित्त प्रसन्न होता है और एकाग्र रहता है।

ii) “प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य।।” [19]

अर्थात् अन्दर के वायु को बाहर पूरे वेग से बाहर फेंककर (प्रश्वास) वहीं रोक देने (बाह्य कुम्भक) तत्पश्चात् बाहर के वायु को अन्दर लेकर (श्वास) वहीं रोक देने (अभ्यान्तर कुम्भक) का अभ्यास करने से चित्त की एकाग्रता होती है।

iii) “विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धनी।।” [20]

भावार्थ यह है कि गंध, रस, रूप, स्पर्श और शब्द पाँच प्रकार विषय होते हैं, जो नासिकाग्र पर धारणा करने से जो दिव्य गन्ध की अनुभूति है वह गन्धप्रवृत्ति होती है, जिह्वाग्र पर धारणा करने से जो दिव्य रस की अनुभूति है वह रसप्रवृत्ति होती है, तालु में धारणा करने से जो दिव्य रूप की अनुभूति है वह रूपप्रवृत्ति होती है, जिह्वा के मध्य में धारणा करने से जो दिव्य स्पर्श की अनुभूति है वह स्पर्शप्रवृत्ति होती है और जिह्वामूल में धारणा करने से जो दिव्य शब्द की अनुभूति है वह शब्दप्रवृत्ति होती है। ये प्रवृत्तियाँ प्रकाशित होती हैं तो चित्त से संशय हट जाता है तथा चित्त स्थिरता को प्राप्त करता है। “यहाँ पर यह जानना चाहिये कि गंध, रस, रूप, स्पर्श, शब्दादि सूक्ष्म विषयों का साक्षात्कार होने से चित्त की एकाग्रता होती है और इन गन्धादि विषयों के साक्षात्कार से साधक के संशयों का निराकरण होने लगता है।”[21]

iv) विशोका वा ज्योतिष्मती।।[22]

जैसे, पूर्वोक्त सूत्र में गन्धादि पाँच प्रवृत्तियों का कथन किया गया है, यहाँ पर दो अन्य प्रवृत्तियाँ ‘विशोका’ एवं ‘ज्योतिष्मती’ का कथन किया गया है। प्रथम ‘विशोका’ से अभिप्राय है ‘शोकरहित’ अर्थात् ऐसी प्रवृत्ति जो कि सुखमय अभ्यास के कारण शोक दूर होने से बनती है। ‘शोक’ रजोगुण प्रवृत्ति का परिणाम है और ‘सुख’ सात्विक प्रवृत्ति का। “योगाभ्यास करने से तमोगुण, रजोगुण का प्रभाव न्यून हो जाता है और सत्वगुण की प्रधानता हो जाती है।”[23] दूसरी, ‘ज्योतिष्मती’ से अभिप्राय सात्विक प्रवृत्ति से है। ज्योति का अर्थ यहाँ पर ‘ज्ञान’ है, जो कि ज्ञानस्वरूप जीवात्मा के लिये प्रयुक्त है। जीवात्मा पर ध्यान करने से जो संशय रहित प्रवृत्ति होती है, वह ‘ज्योतिष्मती’

प्रवृत्ति' होती है। अतः 'विशोका' अथवा 'ज्योतिष्मती' प्रवृत्ति का आश्रय लेने से चित्त स्थिरता को प्राप्त होता है।

v) "वीतरागविषयं वा चित्तम्॥"[24]

अर्थात् राग से रहित चित्त का आश्रय लेने में सलग्न योगी का चित्त स्थिरता को प्राप्त करता है। इसी प्रकार,

vi) "स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा॥"[25]

अर्थात् स्वप्न ज्ञान अथवा निद्राज्ञान का आश्रय लेने से योगी का चित्त स्थिरता को प्राप्त करता है। इसका अभिप्राय है, जिस प्रकार अच्छे स्वप्न लेने से अथवा अच्छी निद्रा सेवन करने से व्यक्ति प्रसन्नचित्त हो जाता है, बिना निद्रा सेवन किये स्वप्न अथवा निद्रा के वैसे ही ज्ञान का चित्त में अनुभव कर लेने से भी योगी का चित्त स्थिरता को प्राप्त करता है।

"यथाभिमतध्यानाद्वा॥"[26]

अर्थात् उपरोक्त के साधनों में से और शास्त्र-सम्मत अन्य साधनों में जो भी मत साधक को अच्छा लगे, उसका अभ्यास करने से चित्त स्थिरता को प्राप्त होता है। 'यथाभिमत' से अभिप्राय 'स्वेच्छापूर्वक अथवा स्वमतानुसार' नहीं है, इसलिये किसी मूर्ति आदि पदार्थ में ध्यान लगाना उचित नहीं। 'ऐसा जानना और मानना ही श्रेयकर है, क्योंकि मूर्ति एक जड़ वस्तु है जो कि "जड़ का ध्यान करने वाले का आत्मा भी जड़ बुद्धि हो जाता है क्योंकि ध्येय का जड़त्व धर्म अन्तःकरण द्वारा आत्मा में अवश्य आता है।"[27]

सांख्य के अनुसार ध्यानः

महर्षि कपिल सांख्य के रचयिता हैं। उन्होंने ज्ञान प्राप्ति को मुक्ति का आधार बताया है। उनके अनुसार, "रागोपहतिध्यानम्॥"[28] अर्थात् राग की निवृत्ति का नाम ध्यान है। "वैराग्यादभ्यासाच्च॥"[29] अर्थात् वैराग्य और अभ्यास से राग की निवृत्ति होकर ध्यान (अर्थात् समाधि) की प्राप्ति होती है। राग से निवृत्ति अर्थात् ध्यान की प्राप्ति कैसे हो, इसके लिए महर्षि कपिल उपदेश करते हैं, "वृत्तिनिरोधत् तत्सिद्धिः॥"[30] अर्थात् प्रमाणादि पाँच वृत्तियों के निरोध से ध्यान की सिद्धि होती है। "धारणासनस्वकर्मणा तत्सिद्धिः॥"[31] अर्थात् धारणा, आसन और स्वकर्म के अनुष्ठान से वृत्तियों का निरोध होता है। योग दर्शन में धारणा का अर्थ इस प्रकार किया है, "देशबन्धचित्तस्य धारणा॥"[32] अर्थात् किसी स्थान विशेष में चित्त का स्थिर करना धारणा कहलाता है। सांख्यकार कहता है,

"निरोधश्छर्दिविधारणाभ्याम्॥"[33] अर्थात् स्थान विशेष में चित्त का निरोध (=स्थिर करना) प्राण के छर्दन (= श्वास को वमन की भान्ति बाहर निकालने) से और रोकने से प्राणायाम होता है, (जिससे ध्यान की सिद्धि होती है)। "स्थिरसुखमासनम्॥"[34] अर्थात् जिस स्थिति में सुखपूर्वक शरीर की स्थिरता हो, वह स्थिति आसन कहलाती है। आसन दीर्घकाल तक ध्यान के अभ्यास के लिए अनिवार्य होता है। "स्वकर्म स्वाश्रमविहितकर्मानुष्ठानम्॥"[35] अर्थात् अपने 'आश्रम'[36] के लिए विहित कर्मों का अनुष्ठान स्वकर्म कहलाता है। अर्थात् अपने कर्तव्य कर्मों के अनुष्ठान से राग की निवृत्ति होती है।

अतः उपर्युक्त वर्णन से योग उपासना का सत्य स्वरूप एकदम स्पष्ट हो चुका है, लेकिन आधुनिक काल के आचार्य अष्टांग योग की व्याख्या अलग ही संदर्भ में करते हैं जिससे उन्होंने योग को मात्र शारीरिक पक्ष से जोड़ दिया है, जो उचित नहीं। वास्तव में योग जीवन दर्शन है अर्थात् जीवन के प्रत्येक पहलू से जुड़ा है। अतः इसे जीवन जीने की पद्धति भी कहा जाता है। सत्य भी यही है कि जीवन के मौलिक उद्देश्यों-पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष) को योग उपासना के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्वामी सत्यपति परिव्राजक द्वारा रचित "योगदर्शनम् (महर्षि व्यास भाष्य सहितम्)," प्रकाशक दर्शन योग धर्मार्थ ट्रस्ट, रोजड़, पंचम संस्करण 2018, प्रकाशकीय, पृष्ठ 1
2. महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत "ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका" प्रकाशक-आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली, दशम संस्करण मई 2007, 'अथोपासनाविषयः संक्षेपतः', पृष्ठ 124
3. व्यासभाष्य 1/1
4. यम-नियमासन-प्राणायाम-प्रत्याहार-धारणा-ध्यान-समाधयोऽष्टावगानि॥ - योग सूत्र 2/29
5. योगागाऽनुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः। - योग सूत्र 2/28
6. योगसूत्र 2/30
7. योगसूत्र 2/32

8. योगसूत्र 2/49
9. महर्षि दयानन्द कृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दशम् संस्करण 2007, अध्याय 'उपासनाविधानविषयः' पृ. 133
10. योगसूत्र 2/52
11. योगसूत्र 2/54
12. महर्षि दयानन्द कृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दशम् संस्करण 2007, अध्याय 'उपासनाविधानविषयः' पृ. 134
13. महर्षि दयानन्द कृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दशम् संस्करण 2007, अध्याय 'उपासनाविधानविषयः' पृ. 134
14. तस्य वाचकः प्रणवः।। योगदर्शन 1/27
15. क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।योगदर्शन 1/24
16. तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्।योगदर्शन 1/25
17. स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्। योगदर्शन 1/26
18. योगदर्शन 1/33
19. योगदर्शन 1/34
20. योगदर्शन 1/35
21. स्वामी सत्यपति परिव्राजक कृत "योगदर्शनम्" प्रकाशक दर्शन योग धर्मार्थ ट्रस्ट, रोजड़, पंचम संस्करण अप्रैल 2018, प्रथमः समाधिपादः , पृष्ठ 84
22. योगदर्शन 1/36
23. स्वामी सत्यपति परिव्राजक कृत "योगदर्शनम्" प्रकाशक दर्शन योग धर्मार्थ ट्रस्ट, रोजड़, पंचम संस्करण अप्रैल 2018, प्रथमः समाधिपादः , पृष्ठ 85
24. योगदर्शन 1/37
25. योगदर्शन 1/38
26. योगदर्शन 1/39
27. महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत "सत्यार्थ प्रकाश" प्रकाशक-आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली, 57 वां संस्करण दिसम्बर 2003, 'एकादशसम्मुलासः' पृष्ठ 257
28. सांख्यदर्शन 3/30
29. सांख्यदर्शन 3/36
30. सांख्यदर्शन 3/31
31. सांख्यदर्शन 3/32
32. योगदर्शन 3/1
33. सांख्यदर्शन 3/33
34. सांख्यदर्शन 3/34 एवं योगदर्शन 2/46
35. सांख्यदर्शन 3/35
36. वैदिक व्यवस्था में जीवनकाल को चार आश्रमों में बांटा गया है - ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम और सन्यासाश्रम।

Corresponding Author

Narender Kumar*

Research Scholar, Department of Yoga and Health Sciences, OPJS University, Churu, Rajasthan

nkrohilla2012@gmail.com